दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय की तिथि : 5 अक्टूबर, 2021

निम्न मामले में :-

आप.पुन.या. 549/2018

उर्वशी अग्रवाल व अन्य ....याचिकाकर्ता

द्वारा : श्री प्रवीण सूरी तथा सुश्री कोमल छिब्बर, अधिवक्तागण

बनाम

इंद्रपॉल अग्रवाल ...प्रत्यर्थी

द्वारा : श्री दिग्विजय राय तथा श्री अमन यादव, अधिवक्तागण

कोरम :
माननीय न्यायमूर्ति श्री सुभ्रमोणयम प्रसाद

न्या., सुभ्रमोणयम प्रसाद

आप.वि.आ 11083/2021

1. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत यह आवेदन आपराधिक पुनरीक्षण याचिका 549/2021 में इस माननीय न्यायालय के आदेश दिनांकित 14.06.2021 के पुनर्विलोकन के लिए दायर किया गया है, जिसमें इस न्यायालय ने पुनरीक्षणवादी / याचिकाकर्ता सं. 1 को तब तक

2. अंतरिम भरण-पोषण के रूप में रु.15,000/- प्रति माह प्रदान किया जब तक याचिकाकर्ता सं. 2 अपनी स्नातक की पढ़ाई पूर्ण न कर ले या कमाना न शुरू कर दे, जो भी पहले हो।

3. प्रत्यर्थी के अधिवक्ता श्री दिग्विजय राय ने इस माननीय न्यायालय द्वारा दिनांक 14.06.2021 को दिए गए आदेश को वापस लेने के लिए चार आधार प्रस्तुत किए हैं:

   i. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि आक्षेपित निर्णय अमरेंद्र कुमार पॉल बनाम माया पॉल व अन्य, **(2009) 8 एससीसी** 359 से निपटने में विफल रहा है जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अनुसार, भरण-पोषण प्रदान किए जाने के लिए एक आवेदन तब तक पोषणीय है जब तक संबंधित बच्चे बालिग नहीं हो जाते है। यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता सं. 2 दिनांक 14.08.2018 को बालिग हो गया था, और स्नातक की पढ़ाई पूरी होने पर दिनांक 14.08.2021 तक भरण-पोषण दिया जाएगा।

   ii. श्री राय द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि यह माननीय न्यायालय इस आधार पर आगे बढ़ा कि याचिकाकर्ता सं. 1 एमसीडी में एक प्रवर श्रेणी लिपिक है जो रु. 60,000/- प्रति माह कमाती है, जबकि वास्तव में वह एक सहायक अनुभाग अधिकारी (राजपत्रित) है और जनवरी 2020 के महीने में उसका सकल वेतन रु.71,328/- था। ऐसा कहा गया है कि ये आंकड़े केवल अभिलेख पर हैं, और इस आंकड़े के अलावा, याचिकाकर्ता सं. 1 अपने नियोक्ता से शिक्षा व्यय भी प्राप्त कर रही है। यह प्रत्यर्थी द्वारा प्राप्त आरटीआई के अनुसार प्रस्तुत किया गया है,

याचिकाकर्ता द्वारा सितंबर 2008 से दिसंबर 2008 तक रु. 8,000/-, जनवरी 2009 से मार्च 2009 तक रु. 6,000/- अप्रैल 2009 से सितंबर 2009 तक रु. 12,000/-, अक्टूबर 2009 से दिसंबर 2009 तक रु. 6,000/- और जनवरी 2010 से मार्च 2010 तक रु. 6,000/- प्राप्त किए गए थे । ऐसा प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता सं. 2 व 3 के अब तक के शिक्षण व्यय का भुगतान किया जा चुका है।

iii. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि आक्षेपित निर्णय, याचिकाकर्ता सं.1 को याचिकाकर्ता सं. 2 के बालिग होने की तिथि से जब तक वह अपनी स्नातक की पढ़ाई नहीं कर लेता या कमाना शुरू नहीं कर देता, जो भी पहले हो, को 15,000/- रुपये प्रति माह की राशि को अंतरिम भरण-पोषण के रूप में प्रदान करना इस माननीय न्यायालय के दायरे से बाहर है क्योंकि वह इसे विचारण न्यायालय द्वारा मामले के अंतिम न्यायनिर्णयन से परे की अवधि के लिए बढ़ा नहीं सकता था।

iv. श्री राय द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि इस माननीय न्यायालय ने इस आधार पर मामले के साथ आगे बढ़ने में गलती की कि याचिकाकर्ता सं.1 को भरण-पोषण से इंकार कर दिया गया है जबकि मामला यह था कि याचिकाकर्ता सं. 1 को केवल अंतरिम स्तर पर भरण-पोषण से इनकार किया गया था।

4. इस न्यायालय ने प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता की प्रस्तुतियाँ सुनी हैं और अभिलेख पर तथ्य का अवलोकन किया है।

5. प्रारंभ में, यह न्यायालय यह कहना उचित समझता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 में निहित प्रतिबंध, जो न्यायालय को अपने निर्णय

या मामले के निपटान के अंतिम आदेश को बदलने या समीक्षा करने से रोकता है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत पारित भरण-पोषण के आदेश पर लागू नहीं है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 में निहित अपवाद खंड का अर्थ है कि प्रावधान की कठोरता में दो स्थितियों में ढील दी गई है, सिवाय इसके कि (i) दंड प्रक्रिया संहिता या (ii) तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा अन्यथा उपबंधित है।

5. संजीव कपूर बनाम चंदना कपूर व अन्य, **(2020) 13 एससीसी 172** में, सर्वोच्च न्यायालय ने अवलोकन किया था कि विधायिका को पता था कि ऐसी परिस्थितियां थीं जहां आपराधिक न्यायालय के निर्णय में बदलाव या समीक्षा पर संहिता या किसी अन्य विधि में विचार किया गया था। यह विचार करते हुए कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 एक सामाजिक न्याय विधान था, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 पर समीप से नजर डालने पर स्वयं संकेत दिया गया कि न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अंतर्गत कार्यवाही में निर्णय या अंतिम आदेश पारित करने के बाद यह अधिकारहीन नहीं हो जाता है, और यह कि धारा में ही अभिव्यक्त उपबंध हैं जिनमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन पारित आदेश को रद्द या परिवर्तित किया जा सकता है, और यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125(1), 125(5) व 127 में ध्यान देने योग्य था। इसलिए, दं.प्र.सं.

की धारा 125 और 127 द्वारा जिस विधायी योजना का वर्णन किया गया है वह संहिता में दी गई परिस्थितियों और घटनाओं की स्पष्ट रूप से गणना करता है कि जहां न्यायालय जो निर्णय पारित कर रहा है या मामले के निपटान के अंतिम आदेश को बदल सकता है या उसका पुनर्विलोकन कर सकता है| इस प्रकार, धारा 362 में निहित प्रतिबंध को धारा 125 दं.प्र.सं. के तहत कार्यवाही में ढील दी गई है|

6. दं.प्र.सं. की धारा 125 सामाजिक न्याय के लिए एक उपकरण है जो यह सुनिश्चित करता है कि महिलाओं और बच्चों को संभावित व्याकुलता और अभाव के जीवन से संरक्षित किया जाए| सर्वोच्च न्यायालय ने लगातार यह माना है कि धारा 125 की अवधारणा का उद्देश्य उस महिला की वित्तीय पीड़ा को कम करना था जिसने अपना वैवाहिक घर छोड़ दिया था; यह महिला के साथ-साथ बच्चों (अगर हैं तो) के भरण-पोषण को सुरक्षित करने का एक साधन है| वैधानिक प्रावधान में कहा गया है कि यदि पति के पास पर्याप्त साधन हैं, तो वह अपनी पत्नी और बच्चों का पालन-पोषण करने के लिए बाध्य है और अपने नैतिक और पारिवारिक जिम्मेदारियों से दूर नहीं जा सकता है|

7. *कीर्तिकांत डी. वडोदरा बनाम गुजरात राज्य*, **(1996) 4 एससीसी 479** में, संहिता की धारा 125 के प्रमुख उद्देश्य पर चर्चा करते हुए उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया थाः

*"**15.** ...संहिता की धारा 125 में अंतर्विष्ट उपबंध की परिधि और व्याप्ति पर विचार करते समय यह ध्यान में रखना होगा कि प्रमुख और प्राथमिक उद्देश्य महिला, बालक और अशक्त माता-पिता आदि को सामाजिक न्याय प्रदान करना है और उन लोगों को बाध्य करना है जो उन लोगों का लालन पालन कर सकें जो खुद का पालन-पोषण करने में असमर्थ हैं लेकिन पोषण का एक नैतिक दावा है| धारा 125 के प्रावधान उन महिलाओं, बच्चों और बेसहारा माता-पिता के लिए त्वरित उपचार प्रदान करते हैं जो संकट में हैं| धारा 125 में अंतर्विष्ट परोपकारी उपबंधों के पीछे प्रमुख उद्देश्य स्पष्ट रूप से यह है कि पत्नी, बच्चे और माता-पिता को संकट, अभाव और भुखमरी की असहाय स्थिति में नहीं छोड़ा जाना चाहिए।"*

8. उच्चतम न्यायालय द्वारा *चतुर्भुज बनाम सीता बाई,* **(2008) 2 एससीसी 316** में इसी प्रकार का रुख अपनाया गया था, जिसमें संहिता की धारा 125 से संबंधित कानूनी स्थिति को दोहराया गया था और यह कहा गया था कि यह प्रावधान सामाजिक न्याय का एक उपाय था, जिसे विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों की सुरक्षा के लिए अधिनियमित किया गया था और इस प्रकार यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 39 द्वारा प्रबलित अनुच्छेद 15(3) के संवैधानिक दायरे में आता है| इसलिए, इस उपबंध से संबंधित किसी मामले का न्यायनिर्णयन करते समय यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि धारा 125 का प्रमुख उद्देश्य उन व्यक्तियों को जिनके पास साधन हैं और साथ ही नैतिक दायित्व भी हैं, उन लोगों का समर्थन

करने के लिए बाध्य करके जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं, निर्धनता और अव्यवस्था को रोकना है।

9. यह आगे नोट करने योग्य है कि यह सत्य है कि अधिकांश घरों में, महिलाएं सामाजिक-सांस्कृतिक के साथ-साथ संरचनात्मक बाधाओं के कारण काम करने में असमर्थ हैं, और इस प्रकार वे खुद को आर्थिक रूप से समर्थ नहीं बना सकती| हालाँकि, जिन घरों में महिलाएं काम कर रही हैं और खुद का पोषण करने के लिए पर्याप्त कमाई कर रही हैं, इसका मतलब यह नहीं है कि पति अपने बच्चों के लिए निर्वाह प्रदान करने की अपनी जिम्मेदारी से मुक्त है| एक पिता का अपने बच्चों के लिए समान कर्तव्य है और ऐसी स्थिति नहीं हो सकती है कि केवल मां को ही बच्चों को पालने और शिक्षित करने के खर्चों का बोझ उठाना पड़े|

10. यह न्यायालय इस वास्तविकता से अपनी आंखें बंद नहीं कर सकता है कि केवल बालिग होने से ही यह समझना नहीं चाहिए कि बालिग पुत्र पर्याप्त रूप से कमा रहा है| 18 वर्ष की आयु में, यह सुरक्षित रूप से माना जा सकता है कि पुत्र या तो 12वीं कक्षा से स्नातक कर रहा है या कॉलेज के अपने पहले वर्ष में है| अधिक बार नहीं, यह उसे ऐसी स्थिति में नहीं रखता है जिसमें वह खुद का पालन करने या पोषण करने के लिए कमा सके| यह आगे माता पर पिता से किसी भी योगदान के बिना बच्चों

को शिक्षित करने के खर्चों को वहन करने का पूरा बोझ डालता है, और यह न्यायालय ऐसी स्थिति का सामना नहीं कर सकता है।

11. उच्चतम न्यायालय और अन्य उच्च न्यायालयों ने उनके समक्ष रखे गए अनेकों निर्णयों में मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, यह माना है कि एक पुत्र के बालिग होने के बाद भी दिए गए भरण-पोषण भत्ते को इस आधार पर बरकरार रखा है कि यह पिता का कर्तव्य है कि बच्चे की बुनियादी शिक्षा का वित्तपोषण करना और कि उसके माता-पिता का तलाक होने के कारण बच्चे को शिक्षा के अपने अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता है| *चंद्रशेखर बनाम स्वप्निल और अन्य,* **आपराधिक अपीलीय सं. 265-266/2021** में, सुप्रीम कोर्ट ने हाई स्कूल के बाद अपना पहला डिग्री कोर्स पूरा करने तक पुत्र को रखरखाव प्रदान करने की व्यवस्था का समर्थन किया था ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि वह अपना भरन-पोषण करने वाला व्यक्ति बन जाए और गरिमा के साथ रह सके| रीटा दत्ता और अन्य बनाम सुभेंदु दत्ता, **(2005) 6 एससीसी 619**, उच्चतम न्यायालय ने भत्ता बरकरार रखा था जो बड़े पुत्र को दिया था जो बालिग हो चुका था|

12. *जयवर्धन सिंह चापोटकट बनाम अजयवीर चापोटकट* में, **सिविल रिट याचिका सं. 2117/2012** में, इस प्रश्न पर रिट याचिका को अनुमति देते हुए कि क्या बालिग होने के बाद भी पिता द्वारा पुत्र को भरण-पोषण का

भुगतान किया जा सकता है, बॉम्बे उच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया था:-

> *"**16.** एक बालिग पुत्र हिंदू विवाह अधिनियम के तहत भरण-पोषण का हकदार नहीं हो सकता है। वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता ने शैक्षिक व्यय के लिए एक विशिष्ट दावा किया है जिसका लाभ वह 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद उठा सकता है। जहां तक आयु का संबंध है, बेटा/दावेदार बालिग हो जाएगा, हालांकि, यह आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने के लिए उचित उम्र नहीं होगी ताकि वह अपनी जीविकोपार्जन कर सके। मामले के दिए गए तथ्यों में, एक सुशिक्षित और आर्थिक रूप से संपन्न माता-पिता का एक बालिग बेटा अपने पिता या माता से शैक्षिक खर्च का दावा कर सकता है, इस तथ्य के बावजूद कि वह बालिग हो गया है। यह सख्त अर्थों में भरण-पोषण नहीं है जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत विचारित है या जैसा कि भरण-पोषण हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 20 के तहत विचारित है।*
>
> *xxxx*
>
> *"**20**. इसे ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय की राय है कि चूंकि पिता प्रत्यर्थी वित्तीय रूप से अच्छी स्थिति में है, यह उसके लिए बाध्यकारी होगा कि वह अपने बेटे के शैक्षिक खर्चों को तब तक वहन करे जब तक कि वह अपना जीवन यापन करने में समर्थ न हो या जब तक वह अपनी शिक्षा पूरी न कर ले। यह वास्तव में, एक*

बालिग बेटे के लिए एक रियायत है और इसलिए, याचिकाकर्ता द्वारा दायर याचिका को अनुमति दी जानी चाहिए।"

13. मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा, टी. विमला बनाम एस. रामाकृष्णन, **आप. आर.सी. (एमडी) सं. 180/2014** में, यह देखते हुए कि हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 20 के परिणामस्वरूप बालिग होने के बाद बेटियों का भरण-पोषण किया जा सकता है, इस बात पर जोर दिया गया था कि कानून, अर्थात संहिता की धारा 125 की उदारतापूर्वक व्याख्या की जानी थी और साथ ही अपने बच्चों के शैक्षिक खर्चों को पूरा करने के लिए एक पिता के दायित्व की भी व्याख्या की जानी थी। इसने निम्नलिखित रूप से मत व्यक्त किया था:-

*"**18**. धारा 125 दं.प्र.सं. का उद्देश्य बच्चों को छत, भोजन, कपड़े और जीवन की आवश्यकताओं की कमी से बचाना भी है। बच्चों के जीवन में शिक्षा एक महत्वपूर्ण पहलू है। इसके लिए धन राशियां खर्च करनी होंगी। उस प्रकार के व्यय को शैक्षिक व्यय कहा जाता है। हर पिता अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा देने के लिए बाध्य होता है। किसी भी पिता से अपराधी या अव्यवस्थित व्यक्ति पैदा करने की उम्मीद नहीं की जाती है। इस प्रकार, उसे अपने बच्चों की शिक्षा का खर्च उठाना होगा। बच्चों को शैक्षिक खर्चों को पूरा करके अपनी शिक्षा को बनाए रखना होता है। फुटपाथ पर बैठा आदमी भी अपने बच्चों का जीवन में एक योग्य व्यक्ति बनने का सपना देख रहा होगा। इसलिए, अपने बच्चों के शैक्षिक खर्चों को पूरा करने के लिए एक पिता भरंण-पोषण के दायित्व को घटक में से बाहर नहीं*

रखा जा सकता है। धारा 125 दं.प्र.सं. केवल जीवन हेतु भोजन के लिए नहीं है, यह विचार हेतु भोजन के लिए भी होनी चाहिए। अन्यथा, जहां तक बच्चों का संबंध है, हम धारा 125 दं.प्र.सं. के उद्देश्य मात्र के साथ क्रूरता कर रहे होंगे।"

14. वर्तमान मामले में, बालिग पुत्र की शिक्षा के लिए प्रदान किए गए भरण-पोषण को चुनौती प्रत्यर्थी द्वारा इस आधार पर दी गई है कि यह प्रासंगिक वैधानिक प्रावधान अर्थात धारा 125 के विपरीत है और यह कि यह धारा 125 की व्याख्या का पूर्ण रूप से विरोध करती है जैसा कि <u>अमरेंद्र कुमार पॉल बनाम माया पॉल व अन्य</u> (पूर्वोक्त) में अभिनिर्धारित किया गया है।

15. <u>अमरेंद्र कुमार पॉल बनाम माया पॉल व अन्य</u> (पूर्वोक्त) में उच्चतम न्यायालय ने धारा 125 दं.प्र.सं. की व्याख्या की है और यह अभिनिर्धारित किया कि भरण-पोषण के अनुदान के लिए आवेदन किसी नाजायज या वैध बच्चे के लिए, चाहे विवाहित हो या नहीं, तब तक पोषणीय होगा जब तक कि वह बालिग न हो और अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हो। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :-

"इसलिए, जहां तक बच्चों का संबंध है, भरण-पोषण के अनुदान के लिए एक आवेदन तब तक पोषणीय है जब तक कि वे बालिग नहीं हो जाते। रखरखाव के अनुदान के लिए वाद हेतुक केवल उस स्थिति में उत्पन्न होगा जब पर्याप्त साधन वाला व्यक्ति अपने वैध या नाजायज नाबालिग बच्चे, जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है के भरण-पोषण की उपेक्षा करता है या इनकार करता है, इसलिए, एक बार बच्चे के

बालिग हो जाने के बाद, उक्त प्रावधान उनके मामलों में लागू नहीं होगा।"

16. इस समय आक्षेपित निर्णय से सुसंगत भाग को पुनः प्रस्तुत करना उचित होगा जिसे प्रत्यर्थी द्वारा वापस लेने की मांग की गई है। यह इस प्रकार है:-

> *"**12**. याचिकाकर्ता सं.1 दिल्ली नगर निगम में प्रवर श्रेणी लिपिक के रूप में कार्यरत है, जो लगभग रु. 60,000/- प्रति माह कमा रहा है। अभिलेख दर्शाते हैं कि प्रत्यर्थी ने अपना वेतन प्रमाण पत्र दाखिल किया है जो दर्शाता है कि नवंबर, 2020 तक उसकी सकल मासिक आय रु. 1,67,920/- है। दोनों बच्चे अपनी मां के साथ रहते हैं। बालिग होने की उम्र प्राप्त करने के बाद, याचिकाकर्ता सं. 2 का पूरा खर्च अब याचिकाकर्ता सं. 1 द्वारा वहन किया जा रहा है। याचिकाकर्ता सं. 1 को याचिकाकर्ता सं. 2 के पूरे व्यय का ध्यान रखना है जो अब बालिग हो चुका है लेकिन कमा नहीं रहा है क्योंकि वह अभी भी पढ़ रहा हॉ। अतः, विद्वान परिवार न्यायालय इस तथ्य की सराहना करने में असफल रहा कि चूंकि प्रत्यर्थी द्वारा याचिकाकर्ता सं. 2 के प्रति इसमें कोई अभिदाय नहीं किया जा रहा है, इसलिए याचिकाकर्ता सं. 1 द्वारा अर्जित वेतन याचिकाकर्ता सं.1 के लिए अपना भरण-पोषण करने के लिए पर्याप्त नहीं होगा। यह न्यायालय इस तथ्य पर अपनी आंखें बंद नहीं कर सकता है कि 18 वर्ष की आयु में याचिकाकर्ता सं. 2 की शिक्षा अभी समाप्त नहीं हुई है और याचिकाकर्ता सं. 2 खुद का भरण-पोषण नहीं कर सकता है। याचिकाकर्ता सं. 2 ने 18 वर्ष की आयु पूरी करने पर मुश्किल से अपनी 12वीं कक्षा उत्तीर्ण की होगी और इसलिए याचिकाकर्ता सं. 1 को याचिकाकर्ता सं. 2 की देखभाल करनी*

होगी और उसका पूरा खर्च वहन करना होगा। यह नहीं कहा जा सकता है कि एक पिता का दायित्व तब समाप्त हो जाएगा जब उसका बेटा 18 वर्ष का हो जाएगा और पूरा बोझ केवल मां पर पड़ेगा। मां द्वारा अर्जित धनराशि पिता द्वारा किसी भी योगदान के बिना उस पर और उसके बच्चों पर खर्च की जानी है, क्योंकि बेटा बालिग हो गया है।

न्यायालय जीवन यापन की बढ़ती लागत पर अपनी आंखें बंद नहीं कर सकता है। ***यह आशा करना युक्तिसंगत नहीं है कि प्रत्यर्थी द्वारा अपनी बेटी के भरण-पोषण के लिए दी गई भरण-पोषण की छोटी राशि के साथ मां अकेले अपने लिए और बेटे के लिए पूरा बोझ उठाएगी| याचिकाकर्ता सं. 1 द्वारा अर्जित राशि तीन के परिवार के लिए अर्थात माँ और दो बच्चों को खुद को जीवित रखने के लिए पर्याप्त नहीं होगी । याचिकाकर्ता सं. 2 पर खर्च की गई राशी याचिकाकर्ता सं.1 के लिए उपलब्ध नहीं होगी| इसलिए यह न्यायालय याचिकाकर्ता सं.1 को अंतरिम रखरखाव के रूप में रु.15,000/- प्रति माह के रूप में राशि देने के लिए इच्छुक है। उस की तारीख से जब याचिकाकर्ता सं. 2 की वयस्कता की आयु प्राप्त करेगा से जब तक कि वह अपना स्नातक पूरा नहीं कर लेता है या जो भी पहले हो कमाई करना शुरू कर देता है।*** *वर्तमान याचिका वर्ष 2008 में दयार की गई थी| विद्वान परिवार न्यायालय को प्राथमिक रूप से इसकी एक प्रति प्राप्त होने के 12 मास के भीतर शीघ्रता से निपटान करने का निदेश दिया जाता है।"*

(जोर दिया गया है)

17. उपर्युक्त पैरा के सुसंगत भाग के अवलोकन से पता चलता है कि इस न्यायालय ने याचिकाकर्ता सं. 2 (पुत्र जिसने वयस्कता प्राप्त कर लिया है) को अंतरिम भरण-पोषण भत्ता नहीं दिया है, बल्कि याचिकाकर्ता सं.1 को

याचिकाकर्ता सं.2 का भरण-पोषण करने के लिए दिया है, जब तक कि वह अपना स्नातक पूरा नहीं कर लेता या कमाई शुरू नहीं कर देता, जो भी पहले हो। इसे ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा जिस निर्णय पर भरोसा किया गया वह निर्णय तत्काल मामले पर लागू नहीं होता है क्योंकि पहली बार में व्यस्क बेटे को भरण-पोषण नहीं दिया है, बल्कि मां को दिया गया है। इसलिए, जिस आधार पर प्रत्यर्थी ने आक्षेपित निर्णय को वापस लेने की मांग की है वह इस मामले से संबंधित नहीं है।

18. इसके अलावा, दलीलें कि इस न्यायालय ने इस आधार पर कार्यवाही में गलती की है। कि याचिकाकर्ता सं.1 को भरण-पोषण प्रदान नहीं किया गया है और याचिकाकर्ता सं.1 के नियोक्ता द्वारा शैक्षिक व्यय का वहन किया जा रहा है इस पर विचार नहीं किया जा सकता क्योंकि प्रत्यर्थी का यह कर्तव्य है कि वह अपने बच्चों की परवरिश और उन्हें शिक्षित करने की जिम्मेदारियों को अंत तक निभा नहीं सकता है|

19. मामले को बंद करने से पहले, यह न्यायालय आगे यह ध्यान दें चाहेगा कि कानूनों या प्रावधानों, जो विशेष रूप से समाज कल्याण को आगे बढ़ाने के लिए हैं, का उदारतापूर्वक अर्थ लगाया जाना चाहिए। यह अच्छी तरह से तय है कि न्यायालयों को एक सामाजिक विधान में प्रावधानों का अर्थ लगाते हुए उद्देश्यपूर्ण व्याख्या के नियम को अपनाना

चाहिए और इसे इस तरह से किया जाना चाहिए जो उस उद्देश्य को आगे बढ़ाता है जिसके लिए विधान अधिनियमित किया गया था। इसलिए, विधायी इरादा, अर्थात अधिनियम के प्रयोजन और उद्देश्य को इसकी संपूर्णता में पढ़ा जाना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि न्यायालय की व्याख्या उस संकट को आगे नहीं बढ़ाता है जिसे पहले विधायिका द्वारा रोकने की मांग की गई थी। (एस. गोपाल रेड्डी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, **(1996) 4 एस.सी.सी 596)** देखें)। भारतीय हस्तशिल्प एम्पोरियम और अन्य बनाम भारत संघ, **(2003) 7 एस. सी. सी. 589** में, उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि किसी विधान या सांविधिक उपबंध की सर्वोत्तम पाठगत व्याख्या वह होगी जो संदर्भ से मेल खाती हो। इसलिए, इस संदर्भ में, सामाजिक कल्याण विधानों की संकीर्ण तरीके से व्याख्या नहीं की जा सकती और न ही की जानी चाहिए क्योंकि ऐसा करने से ऐसे विधान के अधिनियमन का उद्देश्य विफल हो जाएगा और यह प्रतिकूल हो जाएगा।

20. सविताबेन सोमाभाई भाटिया बनाम गुजरात राज्य, **(2005) 3 एस. सी. सी. 636** में, उच्चतम न्यायालय, दं.प्र.सं. की धारा की व्याख्या करते हुए कहा था कि कानून की धाराएं जिसका बुलाया गया न्यायालयों द्वारा अर्थान्वयन के लिए पत्थर की लकीर नहीं थी बल्कि सामाजिक कार्यों को पूरा करने के लिए जीवंत शब्द थे। यह कहा कि सामाजिक प्रासंगिकता के

लिए, व्याख्या को महिलाओं और बच्चों जैसे कमजोर वर्गों के लिए संवैधानिक सहानुभूति की उपस्थिति से सूचित किया जाना था। (शांता उपनाम उषादेवी और अन्य बनाम बी.जी. शिवनंजप्पा, **(2005) 4 एस.सी.सी. 468** भी देखें)।

21. दं.प्र.सं. की धारा 125 का संदर्भ यह सुनिश्चित करना है कि पत्नी और पति के बच्चों को तलाक के बाद अभाव की स्थिति में नहीं छोड़ा जाए। पति को यह सुनिश्चित करने के लिए वित्तीय बोझ भी उठाना चाहिए कि उसके बच्चे समाज में एक स्थिति प्राप्त करने में सक्षम हो जिसमें वे खुद को पर्याप्त रूप से भरणपोषण सकते हैं। मां को अपने बेटे की शिक्षा पर पूरे खर्च का बोझ नहीं डाला जा सकता है क्योंकि वह 18 साल का हो चुका है और पिता को अपने बेटे की शिक्षा खर्चों को पूरा करने के लिए सभी जिम्मेदारियों से मुक्त नहीं किया जा सकता है क्योंकि बेटा बालिग हो गया हो, लेकिन आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर न हो और खुद का भरणपोषण करने में असमर्थ हो। एक पिता उस पत्नी को क्षतिपूर्ति करने के लिए बाध्य है, जो बच्चों पर खर्च करने के बाद, खुद का भरणपोषण करने लिए कुछ भी नहीं बचा है।

22. उपरोक्त के आलोक में, आवेदन तदनुसार खारिज कर दिया जाता है।

23. लंबित आवेदन, यदि कोई हो, का निपटान कर दिया जाता है।

न्या.सुभ्रमोणयम प्रसाद

अक्टूबर 05,2021
राहुल

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्द्मेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*